RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-01
January -2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

भारतीय ज्योतिष शास्त्र- एक परिचय

डॉ० मुकेश शर्मा

प्राध्यापक, संस्कृत विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्ज, यमुनानगर ;हरियाणा

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 20 January 2019

Keywords
गगनमण्डल सांगोपांग ज्योतिषशास्त्र

ABSTRACT

द्युति धातु से ज्योतिष शब्द निष्पन्न होता है जिसका अर्थ है प्रकाश युक्त पदार्थ। प्राय: गगनमण्डल में विद्यमान ग्रह-नक्षत्रादि को ज्योतिष कहा जाता है। और इन प्रकाशमय बिम्बों का सांगोपांग वर्णन जिस शास्त्र में किया जाता है, उसे ज्योतिष शास्त्र कहते हैं। ज्योतिषशास्त्र के सर्वसम्मत तीन विभाग है- सिद्धान्त, संहिता एवं होरा। सिद्धान्त का अपर नाम गणित है तथा ग्रह सम्बन्धी गणना इसका प्रमुख कार्य है। ग्रह गणना का सम्पूर्ण विश्व पर क्या प्रभाव होगा? ऐसा समष्टिगत विचार संहिता ज्योतिष में किया जाता है। ग्रह की गति-स्थिति का व्यक्ति विशेष अर्थात् व्यक्तिगत फल होरा स्कन्ध के अन्तर्गत होता है। ज्योतिष शास्त्र अति प्राचीन काल से प्रचलित है तथा समाज में इसकी अत्यन्त उपयोगिता एवं आवश्यकता है। भारतीय समाज में प्रचलित षोडश-संस्कार ज्योतिष शास्त्र के बिना सम्पन्न नहीं हो सकते। व्रतोत्सव-पर्वादि का ज्ञान ज्योतिष के माध्यम से ही होता है। यह स्वंय में परिपूर्ण शास्त्र होकर भी चिकित्सा शास्त्र, कृषि शास्त्र, भूगोल विद्या, गणितादि का उपकारक होकर मानव जीवन में परमोपयोगी है।

ज्योतिष शब्द की उत्पत्ति 'द्युति ज्वलति कर्मणो' धातु से ''द्युतेरिसिन्नादेश्च ज:'' सूत्र से रिसिन् प्रत्यय करने पर तदुपरान्त जकारादेश एव गुणादेश होकर ज्योति: शब्द निष्पन्न होता है।[1] ज्योति: शब्द से अच् प्रत्यय करने पर ज्योतिष शब्द सिद्ध होता है तथा अण् प्रत्यय करने पर ज्यौतिष शब्द सिद्ध होता है।[2] इस ज्योतिष शब्द का अर्थ स्पष्ट करते हुए आचार्य लोकमणि दाहाल कहते हैं कि ''अपरिमित गगनमण्डल में जितने प्रकाशमय बिम्ब दिखाई देते हैं वह सभी समष्टि रूप में ज्योति: शब्द से कहे जाते हैं। उनमें भी जो सर्वदा एक समान गति वाले हैं वह नक्षत्र शब्द से जाने जाते हैं। जो प्रतिदिन भिन्न-भिन्न गति वाले हैं वह ग्रह शब्द से कहे हाते हैं। उनमें भी कुछ अमृतमय रश्मियों से युक्त हैं, कुछ विषाक्त रश्मियों वाले हैं, कुछ उभयगुण रश्मियुक्त है तथा कुछ उभयगुण हीनरश्मि वाले हैं। इस प्रकार के नक्षत्र, ग्रह एवं तारकादि ज्योति: पिण्डों की स्थिति, गति, एवं प्रभावादि का वर्णन जिस शास्त्र में वर्णित होता है वह ज्योतिष शास्त्र कहलाता है। ज्योतिषशास्त्र की व्युत्पत्ति ''ज्योतिषां ग्रहनक्षत्राणां गतिमधिकृत्य कृतं शास्त्रम्'' भी की गई है। इसके अनुसार सूर्यादि ग्रह तथा विविध नक्षत्रों की गति-स्थिति आदि का प्रतिपादन करने के लिए विरचित शास्त्र ज्योतिष शास्त्र कहलाता है।[3] इसमें प्रधानतया ग्रह, नक्षत्र आदि ज्योति: पदार्थों का स्वरूप, संचार-परिभ्रमणकाल, मार्गत्व, वक्रत्व, उदयास्त एवं ग्रहण-प्रभृति समस्त घटनाओं का साङ्गोपाङ्ग, निरूपण किया जाता है। ज्योतिष शास्त्र की अन्य व्युत्पत्ति यह है- ''ज्योतिषां सूर्यादि ग्रहाणां बोधकं शास्त्रम्'' इस व्युत्पत्ति के अनुसार सूर्यादि समस्त ज्योतिर्मय पिण्डों के बारे में सर्वविध ज्ञान देने वाले शास्त्र को ज्योतिष शास्त्र कहते है। यहाँ पर बोधक शब्द के अन्तर्गत ज्योतिर्पिण्डों की गति, स्थिति, संचार, उदयास्त एवं ग्रहणादि स्थितियों का शास्त्रीय रीति से प्रतिपादन तथा उनकी गति-स्थिति के द्वारा संसार पर होने वाले प्रभाव का विवेचन भी आ जाता है। इन उपर्युक्त व्युत्पत्तियों में केवल यह अन्तर है कि पहले वाली व्युत्पत्ति में गणित पक्ष एवं खगोलपक्ष को ही सम्मिलित किया गया है जबकि दूसरी व्युत्पत्ति में फलित पक्ष का भी प्रतिपादन किया गया है।

इसके अतिरिक्त इस शास्त्र का अन्य नाम 'ज्योतिर्विद्या' भी है। इसका अर्थ है प्रकाश देने वाली या प्रकाशित करने

RRIJM 2015, All Rights Reserved

वाली अथवा प्रकाश के सम्बन्ध में बतलाने वाली विद्या अर्थात् जिस विद्या से संसार का मर्म, जीवन-मरण का रहस्य तथा जीवन के सर्वविध सुख-दुख के सम्बन्ध में प्रकाश मिले वह ज्योतिर्विद्या या ज्योतिष शास्त्र है। वस्तुतः मानव-जीवन अनेक प्रकार की समस्याओं का सन्दोह तथा उन्नति-अवनति, सुख-दुःख, आत्मिक विकास एवं ह्रास आदि के विभिन्न रहस्यों का एक पिटारा है। यह ज्योतिष शास्त्र जीवन के रहस्यों को व्यक्त करने के साथ-साथ उपयुर्क्त सन्दोह और पिटारे का उसी प्रकार प्रत्यक्षीकरण करा देता है जिस प्रकार दीपक अन्धकार में रखे हुए सभी पदार्थों को हमें प्रत्यक्ष करा देता है:-

यदुपचितमन्यजन्यनि शुभाऽशुभं तस्य कर्मणः प्राप्तिम्।
व्यञ्जयति शास्त्रमेतत् तमसि द्रव्याणि दीप इव।।
(ल०जा० 1/3)

भारतीय संस्कृति एवं सर्वमान्य मान्यताओं के आधार पर आदि ग्रन्थ वेद हैं। जो ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में विभक्त हैं। वेद अपौरुषेय हैं। वेद के प्रमुख छह अङ्ग. है यथा-शिक्षा, कल्प, निक्त, व्याकरण, छन्द और ज्योतिष। श्रीमद् भास्कराचार्य के अनुसार वेदपुरुष का चक्षुः ज्योतिषशास्त्र है:-

शब्दशास्त्रंमुखं ज्यौतिषंचक्षुषी श्रोत्रमुक्तंनिरुकतं च कल्पः करौ।
या तु शिक्षास्य वेदस्य सा नासिका पादपद्मद्वयं छन्द आद्यै बुधैः।।
(सि०शि० मध्यमाधिकार, 1/10)

ज्योतिषशास्त्र का उल्लेख वेदों से लेकर पौराणिक ग्रन्थों तक प्रचुर मात्रा में हुआ है। ज्योतिषशास्त्र को प्राचीनकाल से ही कालबोधक या ज्ञापकशास्त्र के रूप में जाना जाता है। आर्चज्योतिष के अनुसार वैदिकयज्ञों के सम्पादनार्थ कालज्ञान की महती आवश्यकता रहती है। वेदाङ्ग. रूप ज्योतिषशास्त्र कालज्ञापक के रूप में कार्य करता है:-

वेदा हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ता कालानुपूर्व्या विहिताश्च यज्ञा।।
तस्मादिदं कालविधानशास्त्रं यो ज्योतिषं वेद स वेद यज्ञम्।। (आ०ज्यो० 1/36)

इस कालज्ञापक ज्योतिषशास्त्र को सम्यक् प्रकार से समझने के लिए यह आवश्यक है कि इसके भेदों का विचार किया जाए। सामान्यरूप से ज्योतिषशास्त्र के सिद्धान्त, संहिता एवं होरारूप से त्रिस्कन्ध या भेद हैं। बृहत्संहिताकार वराहमिहिराचार्य ज्योतिषशास्त्र के मुख्य रूप से तीन विभाग स्वीकार करते हैं। सिद्धान्त, संहिता एवं होरा:-

ज्योतिः शास्त्रमनेकभेदविषयं स्कन्धत्रयाधिष्ठितं।
तत्कात्स्न्योपनयस्य नाम मुनिभिः सङ्क्षीर्त्यते संहिता।
स्कन्धेऽस्मिन् गणितेन या ग्रहगतिस्तन्त्राभिधानस्त्वसौ।
होराऽन्योङ्ग.विनिश्चयश्च कथितः स्कन्धस्तृतीयोऽपरः।।
(बृ०सं० 1/9)

इन सभी स्कन्धों का अपना-अपना विषयक्षेत्र है। यह तीनों परस्पर जुड़े हैं। इनके योग से ही ज्योतिषशास्त्र पूर्ण होता है। इनका क्रमशः वर्णन करते हैं :-

सिद्धान्तस्कन्ध : इस स्कन्ध के अन्तर्गत सूक्ष्मतम अनिर्वाच्यकाल से लेकर ब्रह्माण्ड की एक सौरसृष्टि के प्रलय तक की कालगणना, सौर-सावन-चान्द्र नक्षत्रों के परिमाणभेद का ज्ञान, मानभेद का ज्ञान, ग्रहों की अनेकविध गतियों का ज्ञान, व्यक्त एवं अव्यक्त दो प्रकार के गणितों (अंकगणित, बीजगणित, रेखागणित व त्रैकोणीय गणित) का ज्ञान, सोदाहरण सोत्तर-प्रश्नज्ञान, पृथ्वी, नक्षत्र एवं सूर्यादि ग्रहों के गतिविधिज्ञापक विविध प्रकार के यंत्रों से तुरीय, कपाल, नलिका, नतोन्नत व फलकादि ग्रहबोधक यंत्रों का निर्माणज्ञान सिद्धान्तज्योतिष के अन्तर्गत आता है[4] A सिद्धान्तग्रन्थों में सूर्यसिद्धान्त, ब्राह्मस्फुटसिद्धान्त, सिद्धान्तसम्राट, सिद्धान्तशिरोमणि आदि प्रमुखग्रन्थ हैं।

संहितास्कन्धः ज्योतिष शास्त्र का द्वितीय प्रसिद्ध संहितास्कन्ध है। प्रथम स्कन्ध में गणितीय प्रक्रिया मुख्य है जोकि ग्रहों की स्थिति की बोधक है। गणितप्रक्रिया से जब ग्रह की गति-स्थिति आदि का स्पष्टीकरण होने के उपरान्त उस ग्रह के समष्टिगत प्रभाव के ऑकलन का विषय संहितास्कन्ध के अन्तर्गत आता है। इसके अतिरिक्त संहितास्कन्ध के अन्तर्गत सूर्य, चन्द्र, राहु, भौमादि ग्रहों के चार, सप्तर्षिचार, कर्मनक्षत्र व्यूह, ग्रहयुद्ध, ग्रहवर्षफल, गर्भलक्षण, गर्भधारण, सद्योवर्षण, सन्ध्यालक्षण, दिग्दाह वर्णन, भूकम्प, उल्का, परिवेश, इन्द्रायुध, रजोलक्षण, द्रव्यनिश्चय, उत्पात, पुष्यस्नान, सामुद्रिकशास्त्र, वास्तुविद्या, वृक्षायुर्वेद, प्रासादलक्षण, वज्रलेप, रत्न परीक्षा, शकुनाऽपशकुनविवरण, काक-अश्व-हस्ति प्रभृति की चेष्टा, पञ्चमहापुरुषलक्षण, पुरुषस्त्रीसमागम योग, शब्द से भविष्य ज्ञान एवं सुन्दर भोजननिर्माण सम्बन्धी विषय आते हैं। इसी स्कन्ध में स्वर-स्वप्न-शकुन एवं अङ्गदर्शन के माध्यम से भविष्य ज्ञान का विचार किया जाता है। बृहत्संहिता, भृगुसंहिता, रावणसंहिता, पाराशरीसंहिता एवं नारदसंहिता प्रभृति ग्रन्थ इसके अन्तर्गत आते

हैं।

होरास्कन्धः ज्योतिषशास्त्र का तृतीय स्कन्ध होरास्कन्ध या जातकस्कन्ध है। होराशब्द अहोरात्र शब्द के आद्यक्षर अकार तथा अन्तिम अक्षर का लोप करने से बना है:-

होरेत्यहोरात्रविकल्पमेके वाञ्छन्ति पूर्वापरवर्णलोपात्।
कर्मार्जितं पूर्वभवे सदादि यत्तस्य पक्तिं समभिव्यनक्ति।।
(बृ०जा० 1/3)

ज्योतिषशास्त्र के सिद्धान्तस्कन्ध से ग्रह की गति-स्थिति आदि का निश्चय होने के उपरान्त संहिता स्कन्धोक्त-नियमों से उस ग्रह का समष्टिगत फलकथन होगा। होरा स्कन्धान्तर्गत नियमों से उस ग्रह का व्यष्टिगत फल का विचार किया जाता है। होरास्कन्ध के अन्तर्गत राशिस्वरूप, ग्रहस्वरूप, वियोनिजन्मज्ञान, निषेकविचार, जन्मविधिविचार, षोडशवर्गविवेक, अरिष्ट व अरिष्टभङ्ग.विचार, भावविवेकविचार, विचार, ग्रहावस्थाविचार, विविधयोगकथन, राजयोगकथन, ग्रहदशाविचार, अष्टकवर्गविचार, स्त्रीजातकविचार, नष्टजातक एवं ग्रह नक्षत्रादि की शान्ति आदि का विचार आता है। इसके अतिरिक्त व्यक्ति विशेष से सम्बद्ध समस्त पक्षों का विचार इस स्कन्ध के अन्तर्गत किया जाता है। होरास्कन्ध के अन्तर्गत ही ताजिकपद्धति भी आती है जिसमें वर्षकुण्डली बनाकर व्यक्ति विशेष का वार्षिक फलादेश किया जाता है। होरास्कन्ध के अन्तर्गत नक्षत्रपद्धति एवं जन्मलग्नपद्धति से फलादेश किया जाता है। होरास्कन्ध के प्रमुख ग्रन्थों में बृहत्पाराशरहोराशास्त्र, बृहज्जातक, होरारत्न, जातकपारिजात, ताजिकनीलकण्ठी, भावकुतूहल, जातकपद्धति आदि प्रसिद्ध ग्रन्थ आते हैं। स्कन्धों के अतिरिक्त कुछ आचार्य शकुन एवं प्रश्न को अलग से स्कन्ध मानकर प ञ्चस्कन्धात्मक ज्योतिषशास्त्र को मानते हैं। शकुन एवं प्रश्न को संहिता एवं होरा में समन्वय करके प्रमुख तीन ही स्कन्ध इस ज्योतिषशास्त्र के होते हैं।

ज्योतिषशास्त्र की वर्तमान में आवश्यकता

ज्योतिषशास्त्र सिद्धान्त, संहिता एवं होरा के भेद से तीन स्कन्धों के रूप में विद्यमान है। वैदिककाल से लेकर वर्तमानसमय तक इस शास्त्र का प्रयोग सभी करते आए हैं। सिद्धान्त स्कन्ध ग्रहों की गति व स्थिति से सम्बन्धित है। संहिता स्कन्ध ग्रह की गति व स्थिति का समष्टिगत प्रभाव स्पष्ट करता है तथा होरा स्कन्ध उस ग्रह विशेष से व्यक्ति विशेष पर पड़ने वाले प्रभाव का स्पष्टीकरण करता है। इसको हम एक उदाहरण से समझ सकते हैं - सूर्यग्रहण सर्वदा अमावस्या को होता है। सिद्धान्तकार ग्रहों की स्थिति से सूर्यग्रहण की स्थिति एवं अवधि को निश्चित करता है तदुपरान्त उस ग्रहण का किस क्षेत्रविशेष या वस्तुविशेष पर सामूहिकप्रभाव क्या होगा? यह संहितास्कन्ध के अन्तर्गत ही निश्चित होता है। सूर्य-ग्रहण का जातकविशेष पर प्रभाव कैसा होगा? यह होरास्कन्ध का विषय है। इन तीनों स्कन्धों की उपयोगिता प्राचीन काल से ही रही है। वर्तमान में भी ज्योतिषशास्त्र पूर्णतया प्रासङ्गि.क है। ज्योतिषशास्त्र के तीनों स्कन्ध बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। सिद्धान्तस्कन्ध संहिता एवं होरा का आधार है तथा बिना फलित के सिद्धान्त भी अपूर्ण है। अतः ज्योतिषशास्त्र की उपयोगिता त्रिस्कन्धों के सहित ही है। व्यवहार के लिए अत्यन्त उपयोगी दिन, सप्ताह, पक्ष, मास, अयन, ऋतु, वर्ष एवम् उत्सवादि का परिज्ञान इसी शास्त्र से ही होता है। यदि मानव समाज को इसका ज्ञान न हो तो धार्मिक उत्सव, सामाजिक त्यौहार, महापुरुषों के जन्मदिवस अपनी प्राचीन गौरवगाथा का इतिहास प्रभृति किसी भी बात का ठीक-ठीक पता न लग सकेगा और न ही उचित समय पर उचित कृत्य किया जा सकेगा। शिक्षित या सभ्य व्यक्ति की बात ही क्या, भारतीय अनपढ़ कृषक भी व्यवहारोपयोगी ज्योतिष ज्ञान से परिचित है। वह भली भाँति जानता है कि किस नक्षत्र में अच्छी वर्षा होती है? अतः कब बीज बोना चाहिए? जिससे फसल अच्छी हो। यदि कृषक ज्योतिषशास्त्र के उपयोगी तत्त्वों को न जानता तो उसका अधिकांश श्रम निष्फल जाता। वर्तमान में भी विशेषकर बिहार, उत्तरप्रदेश के ग्रामीण जन जोकि अनपढ़ होते हुए भी सूर्य, चन्द्र एवं तारों को देखकर सही समय बताने का सामर्थ्य रखते हैं तथा वर्षासम्बन्धी ज्योतिषीय सूत्रों को अपनी वाणी में सुनाकर सबको आश्चर्य चकित कर देते हैं।

ज्योतिषशास्त्र द्वारा यह जाना जाता है कि वृष्टि, अतिवृष्टि, अल्पवृष्टि कब होगी? ऐसा जानकर कृषक अपनी फसल को सुरक्षित रख सकता है अतः यह मानना पड़ेगा कि ज्योतिषज्ञान के बिना कृषिकर्म संभव नहीं है।

डॉ० नेमिचन्द्रशास्त्री के अनुसार ''जहाज के कप्तान को ज्योतिष की नित्य बड़ी आवश्यकता होती है क्योंकि वे ज्योतिष के द्वारा ही समुद्र में जहाज की स्थिति का पता लगाते हैं। घड़ी के अभाव में सूर्य, चन्द्र-नक्षत्रों के पिण्डों को देखकर आसानी से समय का पता लगाया जा सकता है। ज्योतिषज्ञान के अभाव में लम्बी यात्रा तय करना निरापद नहीं है, क्योंकि ज्योतिषज्ञान के द्वारा ही नये देशों और रेगिस्तानों में से रास्ता निकाला जा सकता है तथा अक्षांश और देशान्तर के द्वारा उस

स्थान की स्थिति और उसकी दिशा आदि का निर्णय लिया जाता है। जहाँ की सीमा पैमाइश द्वारा निश्चित नहीं की जा सकती है वहाँ ज्योतिष शास्त्र के द्वारा प्रतिपादित अक्षांश और देशान्तर के आधार पर सीमाएँ निश्चित की गई हैं। भूगोल का अध्ययन तो इस शास्त्र के ज्ञान के बिना अधूरा ही समझा जायेगा। अन्वेषण कार्य को सम्पन्न करना भी ज्योतिषज्ञान के बिना सम्भव नहीं। आजतक जितने भी नवीन अन्वेषक हुए हैं वे या तो स्वयं ज्योतिषी होते थे अथवा अपने साथ किसी ज्योतिषी को रखते थे। एक बार अमेरिका के एक विद्वान ने कहा था कि ग्रह-नक्षत्रों के ज्ञान के बिना नवीन देश का पता लगाना सम्भव नहीं है। जहाँ आधुनिक वैज्ञानिकयन्त्र कार्य नहीं करते अधिक गरमी या सर्दी के कारण उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है, वहाँ ग्रहनक्षत्रों के ज्ञान द्वारा दिक्-देश का बोध सरलता पूर्वक किया जा सकता है। किसी उच्चतम पहाड़ की ऊँचाई और अतिगम्भीर नदी की गहराई का ज्ञान ज्योतिषशास्त्र के द्वारा किया जा सकता है। शायद यहाँ यह शंका की जाये कि पहाड़ की ऊचाँई और नदी की गहराई का ज्ञान रेखागणित के द्वारा किया जाता है, ज्योतिष के द्वारा नहीं, पर गम्भीरता से विचार करने पर मालूम हो जायेगा कि रेखागणित ज्योतिष का अभिन्न अङ्ग. है। प्राचीन ज्योतिर्विदों ने रेखागणित के मुख्य सिद्धान्तों का निरूपण ईसवी पूर्व छठी शताब्दी में ही कर दिया था। इतिहास को भी ज्योतिष ने बड़ी सहायता पहुँचायी है। जिन बातों की तिथि का पता अन्य साधनों के द्वारा नहीं लग सकता है, ज्योतिष के द्वारा सहज ही लगाया जा सकता है। यदि ज्योतिषशास्त्र का ज्ञान नहीं होता तो वेद की प्राचीनता कदापि सिद्ध नहीं की जा सकती थी। श्रद्धेय लोकमान्य तिलक ने वेदों में प्रतिपादित नक्षत्र, अयन और ऋतु आदि के आधार पर ही वेदों का समय निर्धारित किया है। सूर्य और चन्द्र ग्रहणों के आधार पर अनेक प्राचीन तिथियाँ क्रमबद्ध की जा सकती है। भूगर्भ से प्राप्त विभिन्न वस्तुओं का काल ज्योतिषशास्त्र के द्वारा जितनी सरलता और प्रामाणिकता के साथ निश्चित किया जा सकता है उतना अन्य शास्त्रों के द्वारा नहीं।'' [5] ज्योतिषशास्त्र चिकित्साशास्त्र का भी पूर्ण सहायक है। ज्योतिषशास्त्र के ज्ञान के बिना औषधि का निर्माण समय सुनिश्चित नहीं किया जा सकता। ज्योतिषशास्त्र प्रत्येक औषधि के लिए एक निश्चित मुहूर्त्त बतलाता है जिसमें औषधि को छेदकर निर्माण करने से वह औषधि विशिष्ट ग्रहरश्मियों से प्रभावित होकर विशिष्ट गुण सम्पन्न हो जाती है। जो चिकित्सक ज्योतिषशास्त्रोक्त शुभ मुहूर्त में औषधिनिर्माण करता है वह सफल होता है। ज्योतिषशास्त्र का चिकित्सा के क्षेत्र में केवल इतना ही योगदान नहीं है अपितु मानव शरीर में रोग के कारण, रोग की मात्रा एवं रोग की अवधि को जानने के लिए भी उपयोग है। 'आतुरातोपक्रमणीय' की व्याख्या करते हुए भगवान धन्वन्तरि ने सुश्रुत से कहा है कि ''रोगी की चिकित्सा शुरू करने से पहिले वैद्य को उसकी आयु की परीक्षा कर लेनी चाहिए क्योंकि आयु के शेष होने पर ही चिकित्सा द्वारा वह ठीक हो सकता है। यदि आयु शेष हो तो रोग, ऋतु (मौसम) वय, बल एवं औषधि का विचार कर चिकित्सा करनी चाहिए।''[6] फलित ज्योतिष शास्त्र में भी रोगी का फलोदश करने से पहले उसकी आयु की भली भाँति परीक्षा करने पर जोर दिया है:-

आयु: पूर्वं परीक्षेत् पश्चाल्लक्षणमादिशेत्।
अनायुषां हि मनुष्याणां लक्षणै: किं प्रयोजनम्।।
(प्र०मा० 9/3)

जातक की कुण्डली में स्थित ग्रहों एवं योगों के आधार पर रोग के कारण एवं निवारण पर ध्यान दिया जाता है। प्राचीनकाल में आयुर्वैदिक वैद्य भी ज्योतिषशास्त्र के ज्ञाता होते थे तथा वर्तमान में आधुनिक चिकित्सक भी ज्योतिषी के कथनानुसार उचित मुहूर्त्त पर आप्रेशन करते हैं अथवा चिकित्सा सम्बन्धी विचार करते हैं।

ज्योतिष शास्त्र का प्राचीनकाल से अधिकतम उपयोग संस्कारों के सम्बन्ध में होता रहा है। ज्योतिष शास्त्र का इतना गहरा प्रभाव रहा है कि यह मनुष्य के जन्म के पूर्व से प्रारम्भ हो जाता तथा उसके दिवंगत होने तक भी साथ रहता है। ज्योतिष शास्त्र के महत्त्व को मानकर ही गर्भाधान संस्कार से लेकर पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन, पाणिग्रहण एवं अन्त्येष्टि आदि प्रमुख संस्कारों का सम्पादन इसके बिना नहीं होता। डॉ० राजबलीपाण्डेय इस विषय में कहते हैं कि ''संस्कारों के इतिहास में भविष्यज्ञान के समस्त प्रकारों में ज्योतिषविद्या का सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। इसे इतना अधिक महत्त्व आकाशीय नक्षत्रों की ज्योति और उसके सम्बद्ध पौराणिक विश्वासों तथा इस धारणा से प्राप्त हुआ है कि आकाश के सारे नक्षत्र-तारे आदि या तो ईश्वरीय शक्तियों द्वारा नियमित हैं और या वे मृतात्माओं के निवास स्थान हैं।[7]''ज्योतिषशास्त्र की वर्तमान समय में प्रासङ्गि.कता पर डॉ० शुकदेवचतुर्वेदी जी के अनुसार ''आज के जीवन में जो तनाव, असन्तोष, निराशा,

हड़बड़ी, आपाधापी एवं धींगामुश्ती चारों और फैली हुई है, इसका मुख्य कारण यह है कि आज के सुशिक्षित, बुद्धिजीवी एवं शीर्षस्थ लोगों को भी काल (समय) के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं है। क्या काल के सही-सही ज्ञान के बिना आज के ज्ञान एवं विज्ञान को समग्र या परिपूर्ण कहा जा सकता है और नहीं, तो इसे परिपूर्ण मानना, या इस पर गर्व से सीना तानना क्या एक प्रकार का हठ या दुराग्रह नहीं है। वस्तुतः वैदिक काल से लेकर आज तक जीवन के घटना-क्रम को काल के परिप्रेक्ष्य में जानने पहिचानने एवं पूर्वानुमान करने के लिए हमारे महर्षियों एवं मनीषी आचार्यों ने जिन तर्कपूर्ण सिद्धान्तों-प्रविधियों एवं पद्धतियों को नियमों एवं उपनियमों के अनुशासन से प्रतिबद्ध कर आविष्कृत एवं विकसित किया उनके समग्र-संकलन को ज्योतिषशास्त्र कहते हैं। यह एक ऐसी विद्या है जिसमें व्यक्ति एवं ब्रह्माण्ड के जीवन में कब-कब कहाँ-कहाँ और क्या-क्या घटित होने वाला है? इस सबको भली भांति जाना जा सकता है। इस शास्त्र का जीवन के साथ इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि यह जीवन के सभी पहलुओं का विचार कर उसके बारे में सही-सही एवं पर्याप्त जानकारी देकर हमारी सर्वाधिक सहायता करता है। इसलिए यह कहा जा सकता है इस शास्त्र के ज्ञान के बिना आधुनिक ज्ञान-विज्ञान अपूर्ण ही नहीं, अपितु पंगु है।''[8]

ज्योतिष शास्त्र की वर्तमान में आवश्यकता को कुण्डली के द्वादश चक्रों से सरलता से समझा जा सकता है। प्रथम भाव लग्न नाम से जाना जाता है। जातक के जीवन का आधार लग्न भाव ही होता है इसके द्वारा ज्योतिष शास्त्र व्यक्ति का समग्र व्यक्तित्व, यश, अपयश, लाभ-हानि, स्वास्थ्य बतलाता है तदुपरान्त भावों के क्रमशः स्थायी धन, कुटुम्ब, नेत्र, भाई-बन्धु, पराक्रम, सम्मान, प्रतिष्ठा, साहस, माता, भूमि, भवन, वाहन, आभूषण, सुख-शान्ति, विद्या-विनय, सन्तान, बुद्धि, रोग, शत्रु, संगति, लड़ाई-झगड़ा, पत्नी, आयु, मृत्यु, परम्परा, भाग्य, धर्म, पद, कर्म, पिता, आय, व्यय एवं यात्रादि विषयक विचार करता है। इन उपर्युक्त विषयों का ज्ञान ज्योतिष शास्त्र के होरा स्कन्ध के द्वारा ही सम्भव है।

1. द्र०: सिद्धान्त कौमुदी वासुदेवशर्मा, उणादिसूत्रम्, 275
2. द्र०: अधिकृत्य कृतेग्रन्थे, उणादिसूत्रम्।
3. द्र०:भारतीयज्योतिषशास्त्रस्येतिहास, पृष्ठ 2
4. द्र० सिद्धान्त शिरोमणि 1/6
5. द्र०:भारतीय ज्योतिष डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री, पृष्ठ 40
6. द्र०: सुश्रुत संहिता सूत्रस्थानम् 35/3)
7. द्र०: हिन्दुसंस्कार, डॉ० राजबली पाण्डेय, पृष्ठ, 54
8. द्र०: लघुपाराशरीसमीक्षा, भूमिका

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. उत्तरकालामृत- श्री कालिदास / जगन्नाथ भसीन, रंजन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2003
2. ज्योतिषशास्त्र में रोगविचार-डॉ० शुकदेव चतुर्वेदी,मोतीलालबनारसीदास,नईदिल्ली, 2004
3. बृहत्संहिता-श्री वराहमिहिर/रामकृष्ण भट्ट,मोती लाल बनारसी दास, नई दिल्ली, 1997
4. भारतीय ज्योतिष- डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन नई दिल्ली, 2004
5. भारतीय ज्योतिष- श्री शिवनाथ झारखण्डी प्रकाशन ब्यूरो, उत्तर प्रदेश, 1957
6. भारतीय ज्यौतिषविज्ञान- डॉ० सुरकान्त झा, चौखम्बा कृष्णदासअकादमी,वाराणसी, 2006
7. भारतीयवास्तुशास्त्र- प्रो० शुकदेव चतुर्वेदी, श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत
8. विद्यापीठ, कटवारियासराय, नई दिल्ली, 2004
9. लघुजातक-श्री वराहमिहिर/कमलकान्त पाण्डेय,चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन,वाराणसी, 1998
10. सिद्धान्त कौमुदी-श्री भट्टोजि दीक्षित, मोती लाल बनारसी दास नई दिल्ली, 1966
11. सिद्धान्त शिरोमणि-श्री भास्कराचार्य/मुरलीधर चतुर्वेदी,सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी, 1981
12. सुश्रुत संहिता-महर्षि सुश्रुत/डॉ० अम्बिकादत्त शास्त्री,चौखम्बा संस्कृत सीरिज,बनारस, 1954

RRIJM 2015, All Rights Reserved